यमुनापार के घुमंतू बाज़ार

नरेश गोस्वामी

दिल्ली शहर में साप्ताहिक बाज़ार को हम महज़ एक दृश्य की तरह देखकर आगे बढ़ जाते हैं। अकसर इस दृश्य में भीड़ होती है और बल्लियों, बाँसों पर टंगे कपड़े, पटरी या ज़मीन पर रखे प्लास्टिक के बर्तन, कॉस्मेटिक्स के सामान, मसालों के बोरे, चादरें, घर में काम आने वाली रोज़मर्रा की अनगिनत चीज़ें। अकसर इसे हम एक इतनी आमफ़हम चीज़ की तरह लेते हैं कि साप्ताहिक बाज़ारों जैसी परिघटना की विराटता और व्यापकता पर हमारा ध्यान नहीं जाता।

एक अनुमान के मुताबिक़ सप्ताह के प्रत्येक दिन दिल्ली के विभिन्न इलाक़ों में 400 बाज़ार लगे होते हैं। इन बाज़ारों में हर महीने लगभग 70 करोड़ रुपये का कारोबार होता है। इनसे 2 लाख लोग प्रत्यक्ष रूप से जुड़े हैं जबकि 10 लाख लोगों की रोजी-रोटी इन्हीं बाज़ारों से चलती है। सन् 2002 के आँकड़ों के मुताबिक़ एमसीडी को इन बाज़ारों से 70 लाख रुपये की आय हुई।

इतनी बड़ी सामाजिक आर्थिक परिघटना होने के बावजूद, साप्ताहिक बाज़ारों के बारे में कोई व्यवस्थित अध्ययन देखने को नहीं मिलता। साप्ताहिक बाज़ार के स्वरूप, संघटन, उसके सामाजिक चरित्र, यहाँ बिकने वाली वस्तुओं के उत्पादन केंद्र से लेकर बाज़ार तक आने का नेटवर्क, बाज़ार के लगने से पैदा होने वाले सामाजिक स्पेस और बाज़ार के वजूद को बनाए रखने और प्रशासन के हस्तक्षेप से निपटने के लिए की जाने वाली राजनीति को समझने के लिए, हमारे पास पहले से कोई निर्देशिका मौजूद नहीं थी। इसलिए इस अध्ययन के लिए हमने

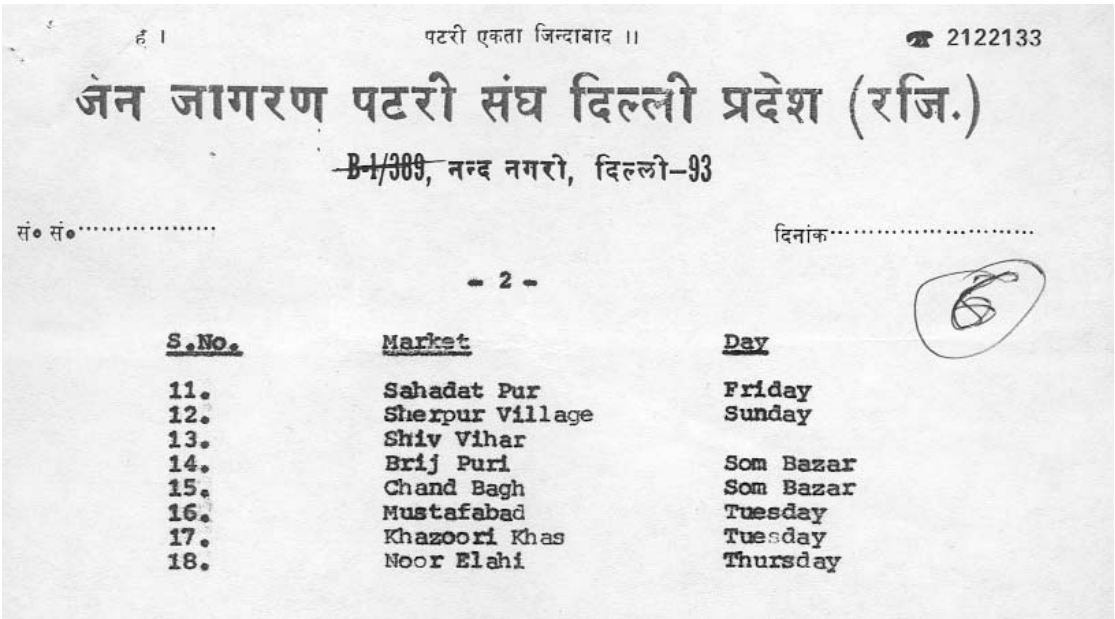

है। पटरी एकता जिन्दाबाद ।। ☎ 2122133

जन जागरण पटरी संघ दिल्ली प्रदेश (रजि.)

~~B-1/389,~~ नन्द नगरी, दिल्ली–93

सं० सं०..... दिनांक.....

– 2 –

S.No.	Market	Day
11.	Sahadat Pur	Friday
12.	Sherpur Village	Sunday
13.	Shiv Vihar	
14.	Brij Puri	Som Bazar
15.	Chand Bagh	Som Bazar
16.	Mustafabad	Tuesday
17.	Khazoori Khas	Tuesday
18.	Noor Elahi	Thursday

मुख्यतः बाज़ार में दुकान लगाने वालों से इंटरव्यू लिए। कई बार हमें एक दुकानदार द्वारा दी गई सूचनाओं को दूसरे लोगों से क्रॉस-वेरीफ़ाई करना होता था, परन्तु धीरे-धीरे इस प्रक्रिया में बाज़ारों की भीतरी संरचना और गतिशीलता को समझने के लिए यह तंत्र खुद ही विकसित होता चला गया।

भौगोलिक स्तर पर यह अध्ययन विशेषकर दिल्ली के उत्तरी-पूर्वी क्षेत्र से ताल्लुक़ रखता है। इस क्षेत्र में हमने ख़ासतौर पर भजनपुरा, गोकुलपुरी, मुस्तफ़ाबाद, चाँदबाग, मौजपुर, मंडोली, नंदनगरी, दिलशाद गार्डन, जनता फ़्लैट्स में लगने वाले बाज़ारों का अध्ययन किया है।

यमुनापार के इस सारे इलाक़े को दिल्ली के अनियोजित और अनियंत्रित फैलाव का प्रतिनिधि उदाहरण माना जा सकता है — सँकरी, आड़ी-तिरछी गलियों और छोटे-बड़े डिब्बों सरीखे मकानों की बेतरतीबी। इस समूचे इलाक़े की बस्तियाँ आपस में आमतौर पर सड़कों से नहीं बल्कि गलियों से जुड़ती हैं। पहली नज़र में बाहरी आदमी के लिए यह इलाक़ा कोई खास दिलचस्पी पैदा नहीं करता क्योंकि पुरानी दिल्ली के कूचों-गलियों-हवेलियों की तरह इस इलाक़े की बस्तियों के पास न कोई विशिष्ट इतिहास है, न अज़ीम क़िस्सा, न कोई परम्परा।

दरअसल यह सारा इलाक़ा पिछले तीस-पैंतीस वर्षों के दौरान विकसित हुआ है। इससे पहले यह घौंडा, मौजपुर, खजूरी जैसे गाँवों की खेती की ज़मीन थी। दिल्ली में 1982 में आयोजित किए गए एशियाई खेलों से इस क्षेत्र में बसावट की प्रक्रिया में और तेजी आई। इस दौरान दिल्ली में बड़े पैमाने पर निर्माण कार्य हुआ जिसके चलते इस इलाक़े में पश्चिमी उत्तर प्रदेश, उत्तराँचल, पूर्वी उत्तर प्रदेश और बिहार से मज़दूरों, राजमिस्त्रियों, दस्तकारों और दूसरी तरह के कामगारों का व्यापक स्तर पर प्रवेश हुआ। आठवें दशक के उस शुरुआती दौर में दिल्ली जैसे लोगों के लिए अवसरों की नगरी थी। अगर प्रवासी लोगों के एक हिस्से को भवन निर्माण आदि में सीधे काम मिल जाता था तो दूसरे लोगों के लिए उनके इर्द-गिर्द ढाबों, चाय और पान-बीड़ी की दुकानों की सम्भावनाएँ खुल जाती थीं। आज इस इलाक़े की विभिन्न बस्तियों में उस दौर के प्रवासी ही फैले हुए हैं। लेकिन उनकी दूसरी पीढ़ी के लिए दिल्ली अब 'परदेस' नहीं है।

बहरहाल, साप्ताहिक बाज़ारों का अध्ययन करते हुए एक समस्या लगातार यह बनी रही कि समूची संरचना को समझने के बाद ही उसके किसी एक पहलू पर फ़ोकस किया जा सकता था।

इसके चलते हमें साप्ताहिक बाज़ारों के कई पहलुओं पर एक साथ ध्यान देने को मजबूर होना पड़ा। हालाँकि अध्ययन के लिहाज़ से कई सारे पक्षों पर एक साथ विचार करना वांछनीय नहीं था। परन्तु उन पहलुओं को दरकिनार करके साप्ताहिक बाज़ारों की समूची संरचना को देख पाना भी मुश्किल था। इसके लिए हमने कुछ सवालों के साथ सफ़र शुरू किया जैसे कि -

— बाज़ार में दुकान लगाने वाला व्यक्ति बाहर से आया है या कि मूलतः दिल्ली का है।
— उसकी जाति क्या है और कहाँ तक पढ़ा है?
— दिल्ली में किराए पर रह रहा है या कि अपना मकान बना लिया हैं।
— मासिक आय लगभग कितनी है? बच्चों को इसी काम में लगाना चाहता है या उनके बारे में कुछ 'बेहतर' सोचता है?
— फ़ैक्ट्री बंदी का रोज़गार पर क्या फ़र्क़ पड़ा है?
— क्या अलग-अलग जगहों/कॉलनियों के बाज़ारों में कोई फ़र्क़ होता है या सभी का स्वरूप एक जैसा होता है?
— बाज़ार में सबसे ज़्यादा स्टॉल किस उत्पाद के हैं?
— पिछले दस वर्षों से बाज़ार में नया क्या कुछ हुआ है?
— माल कहाँ से ख़रीदते हैं?
— पटरी बाज़ार के सामानों की गुणवत्ता में क्या फ़र्क़ होता है?
— बाज़ार कहाँ-कहाँ लगाते हैं?
— बाज़ार लगाने में दिक़्क़तें, प्रशासन-पुलिस, एमसीडी का रवैया आदि।

इसके अलावा हमने तीन उत्पादों का प्रोफ़ाइल तैयार किया और लोगों से उन वस्तुओं के उत्पादन केंद्रों, विज्ञान तंत्र, सेल्स प्रोमोशन, बेचने के तरीक़ों के बारे में बातचीत की।

खैर, सबसे पहले हम ये देखें कि पूर्वोक्त सवालों से क्या तस्वीर उभरी है?

इस इलाक़े में बाज़ार लगाने वाले लोगों में ज़्यादातर विस्थापित हैं और उनमें से ज़्यादातर लोग बिहार के बजाय पूर्वी उत्तर प्रदेश से ताल्लुक़ रखते हैं। पहाड़/उत्तरांचल के लोग इस व्यवसाय में लगभग न के बराबर हैं। बाज़ार के जातिगत विन्यास को देखने पर पता चलता है कि इसमें ज़्यादातर लोग हिन्दू-मुसलमानों की दलित, पिछड़ी जातियों से आते हैं। लगभग आधे दुकानदारों के पास अपने मकान हैं। दुकानदारों की मासिक आय का वितरण दर्शाता है कि यह मूलतः निम्नवर्गीय दुकानदारों और औसतन निम्न-मध्यवर्गीय उपभोक्ताओं का बाज़ार है। इन बाज़ारों में मध्यवर्गीय कॉलनी के लोग कुछ खास चीज़ों जैसे बेडशीट या फुटकर सूती कपड़े के लिए आते हैं। एक आम दुकानदार की मासिक आय 3 से 4 हज़ार के बीच रहती है।

यह आँकड़ा उन दुकानदारों के बारे में हैं जो अपेक्षाकृत बड़े और ज़्यादा विज़िबल क़िस्म के काम करते हैं। जैसे रेडीमेड गारमेंट्स (बच्चों की फ़्रॉक, जीन्स-टीशर्ट आदि), कॉस्मेटिक्स, फुटवेयर, बर्तनों आदि का काम करने वाले। छोटे पैमाने पर काम करने वाले लोगों में — अचार बेचने वाले, ब्रा, ब्लाउज़ या पेटीकोट खुद तैयार करके बेचने वाले लोग शामिल हैं।

सभी बाज़ार एक जैसे नहीं होते। दुकानदार उन्हें एक प्रकार की ग्रेड व्यवस्था भी देते हैं। ग़ौर से देखने पर पता चलता है कि साप्ताहिक बाज़ार एक मल्टीलेअर्ड परिघटना है। बाज़ार छोटे-बड़े होते हैं, कुछ को 'कमाऊ' कहा जाता है और कुछ को 'ख़तम' कहा जाता है। दरअसल बाज़ार की स्पेशियल लोकेशन ही किसी बाज़ार को अच्छी, औसत या कम कमाई का दर्जा देती है।

उदाहरण के लिए हमारे अध्ययन क्षेत्र में गोकुलपुरी, मौजपुर, नंदनगरी में क्रमशः मंगलवार, बुधवार और मंगलवार को बाज़ार लगते हैं। ये बाज़ार कमाई के लिहाज़ से बड़े बाज़ार माने जाते हैं। इनमें हरेक बाज़ार की कुछ ख़ास जनसंकुल अवस्थितियाँ हैं। गोकुलपुरी, वज़ीराबाद-ग़ाज़ियाबाद मुख्य सड़क के नज़दीक हैं। और यह समूचा इलाक़ा पीछे की तरफ़ फैला हुआ है इससे गंगा विहार, शिव विहार, यमुना विहार, बृजपुरी और अन्य कई घनी आबादी वाले क्षेत्र जुड़े हैं। इस तरह यह बाज़ार एक बहुत बड़े इलाक़े की ज़रूरतें पूरी करता है। जहाँ एक बाज़ार में कॉस्मेटिक्स या चप्पलों/फुटवेयर की दुकानें तीन या चार होती हैं। इस बाज़ार में कॉस्मेटिक्स का सामान बेचने वाले 12 से 15 स्टॉल तक देखे जा सकते हैं। नंदनगरी के जनता फ़्लैट इलाक़े में लगने वाले बाज़ार में वस्तुओं की वराइटी और क्वालिटी दोनों अलग दिखाई देती है। वहाँ दुकान लगाने वाले लोगों से बात करने पर पता चलता है कि नज़दीकी कॉलनी दिलशाद गार्डन में साउथ इण्डियन लोगों का होना इस बाज़ार को दुकानदारों के बीच लोकप्रिय बनाता है। दुकानदारों के मुताबिक़ 'मद्रासियों' की क्रयक्षमता स्थानीय लोगों के मुक़ाबले बेहतर होती हैं। दक्षिण भारतीयों के बारे में दुकानदारों की आम धारणा यह है कि सामान्य आर्थिक हैसियत के बावजूद उनकी लाइफ़ स्टाइल स्थानीय लोगों से बेहतर होती है।

इस तरह साप्ताहिक बाज़ार की बनावट स्थान विशेष के समुदाय से गहरा ताल्लुक़ रखती है। उदाहरण के तौर पर यमुना विहार के बाज़ार में हमें पुराने कपड़ों की एक भी पटरी दिखाई नहीं देती जबकि अन्य बाज़ारों में एक से तीन आदमी तक पुराने कपड़े बेचने का काम करते हैं।

साप्ताहिक बाज़ारों के संबंध में इस अध्ययन से एक दिलचस्प बात यह सामने आती है कि यहाँ इन बाज़ारों में बिकने वाली कुछ चीज़ों खासकर — कॉस्मेटिक्स, फुटवेयर और रेडीमेड गारमेंट्स उत्पादों में अनाम मैन्यूफ़ैक्चर्स का बोलबाला है। यह बात हैरत में डाल देती है कि लिपस्टिक, फ़ेयरनेस क्रीम, नहाने का साबुन, शैम्पू, इत्र के ऐसे कई ब्रैन्ड जो आमतौर पर दुकानों में नहीं मिलते यहाँ धड़ल्ले से बिकते हैं। उदाहरण के तौर पर 'पार्को' एक नहाने का साबुन है जो 'पेयर्स' की नकल पर बनाया गया है। 'चार्मी' जूतों की पॉलिश है। 'विक्टर' एक हर्बल शैम्पू का नाम है। 'फ़ेयर ऐण्ड केयर' गोरेपन की क्रीम है। 'प्योरडेंट' एक टूथपेस्ट का नाम है। इन उत्पादों का सिर्फ़ और सिर्फ़ साप्ताहिक बाज़ारों में मिलना यह सिद्ध करता है कि ये दुकानदार और इन चीज़ों के उत्पादक

किसी भी ढंग से अपने उत्पाद का विज्ञापन करना ज़रूरी नहीं समझते। उसे पहले से ही अपने बाज़ार में ग्राहक की जानकारी होती है। दरअसल साप्ताहिक बाज़ारों में उपभोक्ता-स्पेस में किसी तरह के विज्ञापन तंत्र का न उभर पाना कई सारी चीज़ों से तय होता है। पहली बात, यहाँ उत्पादक और दुकानदार दोनों ही छोटी पूँजी के खिलाड़ी होते हैं। उन्हें संसाधनों के आधार पर अलग-अलग श्रेणी में रखने का कोई ख़ास मतलब नहीं होता। दूसरे यहाँ ब्रैंड-चेतना मनोवैज्ञानिक वर्चस्व के रूप में तो काम करती है लेकिन वास्तविक ख़रीदारी के समय ठोस आर्थिक हैसियत ही निर्णायक चीज़ हो जाती है। साप्ताहिक बाज़ारों में बिकने वाली लोकप्रिय पॉलिश 'चार्मी' और 'प्योरडेंट' नाम का टूथपेस्ट शायद निम्नवर्गीय उपभोक्ता स्पेस के इस स्थायी द्वंद्व की ओर ही इशारा करते हैं। कम पूँजी और उपभोक्ता की सटीक पहचान साप्ताहिक बाज़ारों में विज्ञापनतंत्र को अलग से नहीं उभरने देती। इसके चलते यहाँ के उत्पाद सूचना के स्थानीय स्रोतों की मदद से बाज़ार में तैरते हैं। उनके पीछे विज्ञापन द्वारा गढ़ी गई ज़िंदगी-से-जीवंत छवियों की कोई भूमिका नहीं होती।

कॉस्मेटिक्स उत्पादों के रैपर पर लिखी जानकारी से पता चलता है कि वे सदर बाज़ार दिल्ली में बनाए जाते हैं। उत्पादकों से बात करने पर ज़ाहिर होता है कि उन्हें इन उत्पादों के पोटेंशियल मार्केट के बारे में बख़ूबी पता होता है। वे यह साफ़ तौर पर जानते हैं कि इन उत्पादों की खपत किस सामाजिक भूगोल में होती है। कॉस्मेटिक्स के सस्ते उत्पादों की खपत नौवें दशक के बाद ज़्यादा बढ़ी है। उनके मुताबिक़ दिल्ली में बाहर से प्रवासी एक ख़ास ढंग का खुलापन महसूस करते हैं और सस्ते में अच्छा दिखने की ख़्वाहिश पूरी करना चाहते हैं। दरअसल साप्ताहिक बाज़ार में बिकने वाले बहुत से उत्पादों के डिस्ट्रीब्यूशन नेटवर्क को देखकर ही यह समझ में आता है कि शहर के सीमान्त की अर्थव्यवस्था कैसी होती है।

बाज़ार की अंदरूनी बनावट को 'ठीये' की अवधारणा बहुत गहराई से प्रभावित करती है। एक ढंग से कहें तो बाज़ार के ख़ास ढाँचे को 'ठीया' ही तय करता है। ठीया बिकता भी है और उसे फ़ौरी तौर पर किराए पर भी उठाया जाता है। दिलशाद गार्डन इलाक़े की कलंदर कॉलनी में कंघी, चाकू, रबड़बैंड आदि का स्टैंड लगाने वाले रोशनलाल ने एक दिन झल्लाकर कहा था कि आज ख़ामख़्वाह 70 रुपये की 'चड्डी' हो गई। जब मैंने इस चड्डी के बारे में पूछा तो उसने बताया कि उसका स्टॉल जहाँ लगा है वह मूलतः किसी और दुकानदार का 'ठीया' है। जिसका इस्तेमाल करने के लिए उसे उक्त दुकानदार को 70 रुपये दिए थे। दरअसल 'ठीया' बाज़ार के अंदर एक ऐसा अनुलंघनीय स्थान माना जाता है जिसे दुकानदार विशेष के साथ जोड़कर देखा जाता है। एक बाज़ार के सभी दुकानदारों के बीच किसी व्यक्ति के स्टैण्ड लगाने के स्थान को लेकर आमसहमति बन जाती है। कोई अन्य दुकानदार उस स्थान पर अपना माल नहीं रख सकता। इस तरह हम देखते हैं कि कैसे उस स्थान को एक समूह-बाज़ार के दुकानदारों की वैधता हासिल हो जाती है। परन्तु इसी सहमति और वैधता के बीच से ठीए की व्यावसायिक महत्ता भी उभरने लगती है। कई बार दुकानदार की हालत पिट जाती है पर ठीया महत्वपूर्ण बना रहता है और बाज़ार में इस ठीए की क़ीमत बढ़ती रहती है। नंदनगरी के जनता फ़्लैट क्षेत्र में बृहस्पतिवार को लगने वाले बाज़ार के एक दुकानदार ने अपने ठीए के बारे में बताया कि उसने यह ठीया पच्चीस हज़ार में लिया था। इससे पहले वह खुद कई जगह अपने ठीये बेच चुका है। ठीये के बारे में यह जानना दिलचस्प है कि एक समय खुद भले यह सेलेबल कमोडिटी बन जाता हो उसकी शुरुआत काफ़ी हताशापूर्ण माहौल में होती है। ठीया बनते या बनाने में एक दुकानदार को सालों लग जाते हैं। शायद यही कारण है कि एक दुकानदार का ठीया 4 या 5 किलोमीटर दूर लगने वाले बाज़ार में तो हो सकता है परन्तु पड़ोस के बाज़ार में नहीं। उदाहरण के लिए सोमवार को भजनपुरा के नजदीक चाँदबाग में बाज़ार लगता है और मंगलवार को उससे सिर्फ़ 2 किलोमीटर की दूरी पर गोकुलपुरी का बाज़ार लगता है। लेकिन चाँदबाग के बहुत सारे दुकानदार गोकुलपुरी के बाज़ार में नहीं

'पार्को' एक नहाने का साबुन है जो 'पेयर्स' की नकल पर बनाया गया है। 'चार्मी' जूतों की पॉलिश है। 'विक्टर' एक हर्बल शैम्पू का नाम है। 'फ़ेयर ऐण्ड केयर' गोरेपन की क्रीम है। 'प्योरडेंट' एक टूथपेस्ट का नाम है।

देखे जाते, क्योंकि वहाँ उनके ठीये नहीं होते।

किसी भी बाज़ार में ठीया कोने से शुरू किया जाता है, फिर जैसे-जैसे बाज़ार का आकार बढ़ता है वैसे-वैसे दुकान बीच की तरफ़ सरकती जाती है। दुकानदार जितना बीच में होता है, उसकी दुकानदारी उतनी ही बढ़िया मानी जाती है। इस तरह ठीये का सवाल बड़ा टेढ़ा होता है, वह एक धीमी और निश्चित प्रक्रिया के बाद ही महत्वपूर्ण बन पाता है। इसलिए यह बात हमेशा देखने में आती है कि दुकानदार अपेक्षाकृत नये और छोटे बाज़ार से शुरुआत करते हैं क्योंकि वहाँ बीच में पहुँचने की उम्मीद काफ़ी रहती है। यह जानते हुए भी कि बड़े बाज़ार में बिक्री ज़्यादा होती है, अधिकांश दुकानदार छोटे बाज़ारों को नहीं छोड़ते क्योंकि वहाँ उनका स्थान स्ट्रेटेजिक होता है। बड़े बाज़ारों में काम जमते-जमते लोगों की उम्र बीत जाती है।

साप्ताहिक बाज़ारों की भीतरी गतिशीलता का ही एक और पहलू यह है कि पिछले दस सालों में रेडीमेड गारमेंट्स के प्रमुख केंद्र गांधीनगर का वर्चस्व टूटा है। अब यमुनापार के कई क्षेत्रों में गारमेंट्स का काम होने लगा है। उदाहरण के लिए सामान्य कपड़ों का निर्माण अशोक विहार में होता है। इसी तरह ऊनी कपड़ों के निर्माण के क्षेत्र में मंडोली का नाम धीरे-धीरे उभर रहा है। दुकानदारों के मुताबिक़ गारमेंट्स के क्षेत्र में इस तरह का विकेंद्रीकरण उनके लिए फ़ायदेमंद साबित हुआ है। इससे गांधीनगर के मैन्युफ़ैक्चरर्स/थोक विक्रेताओं की मोनॉपली टूटी है। पहले वहाँ के डीलर बहुत कम मार्जिन देते थे परन्तु अब वे दुकानदारों से बेहतर ढंग से पेश आने लगे हैं। स्थानीय और घरेलू स्तर पर काम करने वाले उत्पादक खुद बाज़ार में जा कर दुकानदारों से सम्पर्क बनाते और डीलिंग करते हैं।

लेकिन इन बाज़ारों में गारमेंट्स के स्थानीय उत्पादन की बढ़ती हिस्सेदारी के साथ ही यह तथ्य चौंकाने वाला है कि यहाँ कोलकाता में निर्मित फ़्रॉक भी बिकती हैं। इस संबंध में दुकानदार बताते हैं कि कोलकाता में थोक के भाव में एक फ़्रॉक 20 रुपये में पड़ती है, और यहाँ वह 30 से 35 रुपये में बिक जाती है।

साप्ताहिक बाज़ारों में काम कर रहे डिस्ट्रीब्यूशन के नेटवर्क को देखने से यह पता चलता है कि छोटी पूँजी के उत्पादक, दुकानदार और उससे अलग-अलग स्तर पर जुड़े लोगों ने अपना एक स्वायत्त क्षेत्र बनाया है। विज्ञापन पर टिकी भूमंडलीकृत अर्थव्यवस्था के मौजूदा दौर में सामान्य बाज़ारों का यह नेटवर्क वाक़ई हैरत में डाल देता है। यहाँ कोई भी चीज़ ऐसी नहीं जिसे कभी भी, कहीं भी या किसी भी ढंग से विज्ञापन में देखा गया हो। यहाँ ज़्यादातर चीज़ें सूचना के लोक स्रोतों से आती हैं। एक दुकानदार दूसरे को बताता है या उत्पादक खुद वहाँ पहुँच जाता है।

बाज़ार की भीतरी संरचना का अध्ययन करते हुए वहाँ राज्य की प्रशासनिक मशीनरी की मौजूदगी हमारा ध्यान खींचती है। साप्ताहिक बाज़ार एमसीडी की अनुमति और पुलिस के संरक्षण में लगते हैं। लेकिन ग़ौरतलब है कि बाज़ार के संदर्भ में दोनों एजेंसियों की भूमिका प्रायः नकारात्मक होती है। एमसीडी के कर्मचारी हरेक दुकानदार से पाँच रुपये का तहबाज़ारी शुल्क लेते हैं। यह शुल्क दुकानदार को 6x4 फुट की जगह इस्तेमाल करने की एवज़ में लिया जाता है। आमतौर पर एक औसत बाज़ार से एमसीडी के लोग दो-ढाई हज़ार रुपये शुल्क के तौर पर वसूलते हैं, लेकिन इसके बदले उन्हें पानी के टैंकर या शौचालय जैसी बुनियादी सुविधाएँ भी नहीं दी जातीं।

इसी के साथ पुलिस की भूमिका देखें। किसी इलाक़े में बाज़ार लगाने की अनुमति देने से पहले पुलिस यह सुनिश्चित करती है कि बाज़ार में शान्ति-व्यवस्था और आम नागरिक की सुरक्षा को ख़तरा पैदा न हो और बाज़ार इस ढंग से लगाए जाएँ कि ज़रूरत पड़ने पर उसके बीच से फ़ायर बिग्रेड की गाड़ी निकल सके। ऊपर से तय किए गए ऐसे क़ानून असल में पुलिस के हाथों में अतिरिक्त ताक़त दे देते हैं जिसका वह बाज़ार वालों पर इस्तेमाल करती है। यह कहने की ज़रूरत नहीं है कि साप्ताहिक बाज़ार के दुकानदार बाज़ार न लग पाने या उसके बंद होने के सदमे को बर्दाश्त करने की हालत में नहीं होते।

इसलिए वे उन्हें पाँच से दस रुपये के बीच रिश्वत दे कर अपना काम निकालने की जुगत में रहते हैं। अकसर पुलिस का बहाना यह रहता है कि इन बाज़ारों में असामाजिक तत्त्व घूमते रहते हैं जिसके चलते कोई

दुर्घटना हो सकती है। इसके अलावा पुलिस रेहड़ी वालों से 40 से 50 रुपये वसूलकर उन्हें भी बाज़ार में घुसने की इजाज़त दे देती है जबकि क़ानूनन यह ग़लत है। एमसीडी के मुताबिक़ बाज़ार सड़क की दोनों पटरियों पर लगना चाहिए। पुलिस के अलावा एमसीडी कर्मचारी भी हरेक दुकानदार से पाँच रुपये की पर्ची काटने के बजाय उनसे अकसर दो या तीन रुपये में सौदा कर लेते हैं।

अन्ततः पुलिस की वसूली, प्रशासन की बेरुख़ी, आम भ्रष्टाचार और बेरोक-टोक चलने वाली ऐसी और दूसरी क़िस्म की अनियमितताओं के बावजूद साप्ताहिक बाज़ार एक जीवंत स्पेस का निर्माण करते हैं। यहाँ अमरूदों को 'हरे मेवे' कहा जाता है और रिकल-फ्री चमकदार कपड़े को 'चिकल चाँदनी'। यहाँ ठेली पर चाट का स्वाद लेती औरतों की हँसी-ठिठोली को देखा-सुना जा सकता है। यहाँ 'शीतल', 'गौरी', 'मुस्कान', 'मुमताज़' जैसी मानवी नामों की चप्पलें देखी जा सकती हैं। यहाँ नल-दमयंती के पुरा-आख्यानों से लेकर इंडीपॉप तक की ऑडियो कैसेट्स आठ से दस रुपये में ख़रीदी जा सकती हैं। दरअसल साप्ताहिक बाज़ार एक दिन के लिए छोटी-छोटी इच्छाओं का लोकतंत्र बनाता है जहाँ लोगों को लगता है कि चीज़ें हमारी ज़द से बाहर नहीं हैं।

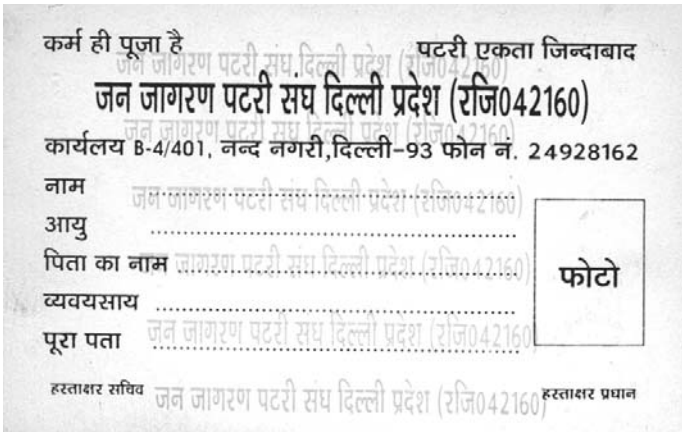
कर्म ही पूजा है पटरी एकता जिन्दाबाद

जन जागरण पटरी संघ दिल्ली प्रदेश (रजि042160)

कार्यलय B-4/401, नन्द नगरी,दिल्ली-93 फोन नं. 24928162

नाम .....

आयु .....

पिता का नाम .....

व्यवयसाय .....

पूरा पता .....

फोटो

हस्ताक्षर सचिव हस्ताक्षर प्रधान